गरीबी और पुरुषवादी मनोवृत्ति की दोहरी मार
खाई जिन्दगी की कहानी–दोपाटन के बीच

–अनवर सुहैल

'दो पाटन के बीच' अनवर सुहैल का दूसरा उपन्यास है। एक कथाकार के रूप में अनवर का नाम बहुत जाना पहचाना और उल्लेखनीय है। अनवर अपनी कथा रचना में अधिकांश मुस्लिम जीवन का परिवेश उपस्थित करते हैं। उनकी रचनात्मकता का महत्व इस अर्थ में विशेष हो जाता है कि वे अल्पसंख्यक मुस्लिम जीवन के बारे में गढ़ी गई भ्रामक कहानियों और विचारों को तोड़ते हुए दिखाई देते हैं। भारतीय समाज को देखने के चश्मे का नंबर कई बार धर्म के हिसाब से बदलता रहता है। अनवर साफ राजनीतिक और सामाजिक दृष्टिकोण से भारतीय समाज को देखने परखने का प्रस्ताव करते है।

'दो पाटन के बीच' में एक गरीब तबके के मुस्लिम परिवार की कहानी बुनी जाती है। सलमा इस उपन्यास की मुख्य पात्र है। उसका चरित्र विपरीत परिस्थितियों से लगातार जूझते हुए अपने अस्तित्व और जिम्मेदारियों के पहचान की है। सलमा, सुरैया और रूकैया तीन बहनें हैं। इनके अब्बू 'मम्दू पहलवान' है जो किसी समय में इलाके के अच्छे पहलवान माने जाते थे, साथ ही हड्डियों ओर नसों की अच्छी जानकारी भी रखते थे। पहलवानी और शिफ़त को पैसे में न बदल पाने के कारण 'मम्दू पहलवान' गरीब ही बने रहते हैं और दूसरे के पास मजदूरी करते हैं। गरीबी से आज़िज आकर तीन बच्चियों की माँ, एक मौलाना के साथ भाग जाती है। सबसे बड़ी होने के कारण सलमा के ऊपर घर की जिम्मेदारी आ जाती है। 'मम्दू पहलवान' मानसिक रूप से टूटते चले जाते हैं। सलमा के हिस्से में संघर्ष और शोषण ही आता है। घर चलाने के लिए सलमा आगे बढ़कर आटा चक्की चलाने जैसा 'मर्दाना' कार्य करना शुरू करती है। इसके लिए वह एक बड़ी कीमत भी चुकाती है। जिसकी शुरुआत पढ़ाई के नाम पर गुरु दक्षिणा देने से शुरु हो चुकी होती है।

सलमा को समाज बहुत जल्दी एक बच्ची से औरत में बदल देता है। घर की परिस्थितियों की मारी सलमा को बाल यौन शोषण का भी शिकार होना पड़ता है। उसके स्कूल के अध्यापक गंगाराम आठवी में पढ़ती सलमा को वह पाठ पढ़ा देते है जिससे वह 'कमसिनी में ही जिस्म को हथियार बनाने की कला, सीख लेती है। इसी हथियार का इस्तेमाल करके वह बैंक मैनेजर विश्वकर्मा से अपनी आटा चक्की के लिए लोन भी पास करा लेती है।

दुनिया और समाज की पर्देदारी को उघाड़ कर देख चुकी सलमा नहीं चाहती है कि उसकी बाकी दोनों बहनों का हश्र भी उसी की तरह हो। वह खुद लड़ते हुए उन दोनों को पढ़ाने लिखाने की हर संभव कोशिश करती है। सुरैया जो कि मंझली बहन है, उसके भीतर किसी भी तरह की जिम्मेदारी या चेतना का विकास नहीं हो पाता है। वह अपनी बड़ी बहन के संघर्ष और जीवन से जुड नहीं पाती है। सलमा के न चाहने के बाद भी सुरैया के कदम उसी तरफ बढ़ते जाते है जिधर जाना बेहद खतरनाक साबित होना था। सुरैया पढ़ाई छोडकर ब्यूटी पार्लर में काम करना शुरू कर देती है। उसकी राज़दार बनती है उसकी छोटी बहन रूकैया। पूरा परिवार एक बार अजमेर की दरगाह पर जियारत करने जाता है। वहाँ सुरैया एक खादिम की ओर आकर्षित हो जाती है। अजमेर में भी सुरैया, सलमा के विश्वास को ठोकर लगाती है। सलमा अपनी बहनों को दुनिया की क्रूर नज़र से बचाने के हर संभव कोशिश करती है, लेकिन एक दिन सुरैया घर छोड़कर भाग जाती है। ब्यूटी पार्लर की मालकिन से पूछने और इधर–उधर खोजने से भी सुरैया का पता नहीं चलता है। अब्बू को घर परिवार से कोई मतलब नहीं रहता है। सलमा इस घटना के बाद टूट सी जाती है। समय बीतने के साथ सलमा को अपने लोन के सिलसिले में एक बार फिर मैनेजर विश्वकर्मा के बेडरूम तक जाना पड़ता है। वहाँ शराब के साथ जीवन का 'असली आनन्द' लेते हुए सलमा 'सुरैया के क्रूर सच' से वाकिफ होती है। सलमा पर पहाड टूटता है।

इस उपन्यास में गरीबी और पुरुषों की शोषण प्रवृत्ति, वह दो पाट के रूप में सामने आते है, जिसमें सलमा और उसके परिवार का जीवन तबाह हो जाता है। मुस्लिम समाज से जुड़ा होने के कारण यह उपन्यास विशेष हो जाता है। औरतों के प्रति रूढ़िवादी दृष्टिकोण से मुस्लिम औरतें दोहरी शोषण की शिकार हो जाती है। जिन सम्पन्न परिवारों में भी केवल लड़कियाँ होती है, उनके प्रति शेष समाज का व्यवहार और विचार बहुत डराने वाला होता है। गरीब होने के साथ ही यह स्थिति भयानकता की ओर बढ़ने लगती है। बाल यौन शोषण की एक कटु सच्चाई भी इस उपन्यास में उभर कर आती है। सलमा के मनोजगत और जीवन को मास्टर गंगाराम का व्यवहार सबसे अधिक प्रभावित करता है। यह समाज लड़कियों को बहुत छोटी उम्र में एक गलीज़ सच से परिचित करा देता है। सलमा जान जाती है कि 'गंगाराम सर पीटने के बहाने उसकी पीठ, कंधे और बाँह की थाह लिया करते है। फिर उसे लगता कि हो सकता है ये उसका वहम हो।' उपन्यास पढ़ने के बाद पाठक को भी वहम की सच्चाई समझ में आ

जाती है। यह उपन्यास 'घिनौने अतीत' वाली सलमा की ओर से पाठकों को जोड़ती है। वह अगर अपने जिस्म को अपना हथियार बनाती है तो उसके पीछे उसका छिछोरापन नहीं है, बल्कि पुरुषवादी समाज की सामाजिक, सांस्कृतिक और अर्थिक सोच का गलीज़ प्रभाव है। धर्म का इस्तेमाल करने वाले लोगों के चेहरे से भी यह उपन्यास, पर्दा उठाता है। सलमा की माँ एक मौलाना के बहकावे में आकर ही तीन बच्चियों को छोड़कर भाग जाती है। सलमा इस तरह के सच को अच्छी तरह जानती है। 'फिर झारखण्ड की किसी मस्जिद के लिए चन्दा लेने आए एक नौजवान मौलाना ने जब रूकैया को देखकर लार सी टपकाई थी, तब सलमा ने रूकैया से कहा था कि इन मौलनाओं के सामने वह निकला न करे। बड़े छिनार होते है।' अन्त में सलमा, सुरैया सहित अपने आप को उसी अन्धे कुँए में गिरा हुआ पाती है।

उपन्यास में बहुत छोटे-छोटे वाक्यों का इस्तेमाल हुआ है। भाषा के स्तर पर भी अनवर सुहैल आम जीवन का ही आधार लेते है। वह हिन्दी - ऊर्दू के धार्मिक बंटवारे की जगह वास्तविक भाषा व्यवहार का इस्तेमाल करते है। इसीलिए आपको 'मुसलमानों के तीज़-त्योहार गिनती के तो होते है।' जैसे वाक्य पूरे उपन्यास में पढ़ने को मिलते है जो सामान्य बोलचाल में प्रयोग होते है। मनोविकारों से उपजी हुयी दन्तकथाओं और अलगाव की मानसिकता वाले इस दौर में अल्पसंख्यक - बहुसंख्यक खाँचें में बॅटे समाज को समय के बड़े सच से परिचित कराने का प्रयास अनवर सुहैल ने अपने इस उपन्यास में किया है।

-मनोज पाण्डेय